हथेलियों में ब्रह्मांड

○

भागीरथ भार्गव

○

कविता प्रकाशन
अलवर राजस्थान

हथेलियो मे ब्रह्मांड
[कविता सकलन]



प्रकाशक
कविता प्रकाशन
आर्य नगर, अलवर।

वितरण
आनन्द प्रकाशन
मन्नी का बड, अलवर।

मुद्रक
बंसीधर मिश्र
अरावली प्रेस,
अलवर।

आवरण
भाऊ समर्थ
टीकाडी लेन, सीताबर्डी
नागपुर।

मूल्य
पाँच रुपए

प्रकाशन
माघ, १९७०

डॉ० श्रीगोपाल माहेश्वरी 'प्रताप'
डॉक्टर जयसिंह नीरज
श्री जुगमन्दिर तायल
को

क्रम

हथेलियो में ब्रह्माड

[इकसठ कविताएँ]

हथेलियों में ब्रह्मांड



दो हथेलियों मे
ब्रह्माड थामे हूँ

उत्ताल तरगा से उद्वेलित
एक विशाल सिन्धु
लहराता है उनमे ।

जलयान इस सिन्धु म
आयात निर्यात करते है
कितने कुरूप व सुन्दर यात्रियो को
आवागमन देते हैं ।

शान्त सिन्धु अशान्त बन जाता है
कितने ज्वार किनारे तोडने को
आतुर हो उठते हैं,
गर्जन भी जन्म लेता है
अनिश्चय के क्षणो मे ।

उन क्षणो मे—
हथेलियो के बीच से
ब्रह्माड छूटने लगता है ।



अनन्त प्रवाह

○

एक के बाद एक
सतीरें ही सतीरें
सतीरो का एक बडा काफिला
सतीरो की समानान्तर पाँतें
एक दूसरे को ओझल करती हुई ।

एक अनन्त प्रवाह
ओर छोर से अनभिज्ञ
मेरे निकट आकर
बार बार टक्करें लेता है ।

मैं कहाँ जाकर डूबूँ
इस अनन्त प्रवाह के साथ ।

◆

घेरे का बन्दी

○

चिर-परिचित ये दृश्य
उल्टे-सीधे टँगे ये चित्र
फरफराते परदे
बिखरते कलेंडरो के पृष्ठ
सिहरती सी हवाएँ
मेरे चारो ओर व्याप्त है।

दीवारो का घेरा
बहुत अटूट है
और कालिमा इनकी
बहुत अमिट,
दरवाजो पर मोटे ताले हैं
जिनकी कुञ्जियाँ मेरे पास नही है।

दीवारें, फिर और दीवार
घेरे फिर और घेरे
इन घेरो का अनन्त क्रम
बढता ही जाता है।

इन्हे भेदने का साहस जुटाने मे
मैं स्वय टूट जाता हूँ
और मुझे अपना गुहा गृह ही
अधिक प्रिय लगने लगता है।



बँधी मुट्ठिया व पथराई दृष्टि

[डॉ॰ जगदीश गुप्त के चित्र को देखकर]



एक दृढ सकल्प के साथ
परस्पर बधी मुट्ठियाँ
वे भी एक दूसरे मे
गुँथी रही।

विवशता के साथ
पथराई हुई दृष्टियाँ
देखती रही
उस क्षण तक
जब तक कि मुट्ठियाँ
शिथिलता से खुल नही गई।



एक चाह एक भय

○

धा धिन ना की
ताल पर
सारगी की मधुर
सगत पर
लय और सुरो के
गणित पर,
उठाऊँ बार-बार
अपने पगो को,
नूँपुरो की झनकार से
गुञ्जित करदूँ मच को,
बार-बार वृत्त म जाऊँ घूम
यूँ अग अग को बनादूँ कैद
और लचकीला इतना कि
जिस कोण पर चाहे झुक जाए।

अपने अस्तित्व को
यूँ छोडना किन्ही सकेतो पर
बार बार चाहता हूँ।
मिटाने इस स्व को
नये रूप रग रचता हूँ।
पर हर बार,
मन दगा दे जाता है
सही निर्देशन के अभाव मे
चाह कैद हो जाती है
और मुझे अपनी चाह से
भय लगने लगता है।



कोई भी आघात



कई बार रगीन परदे पर
किसी हल्के आघात से
हीरो भूल जाता है
अपने विगत को
अपनी प्रेयसी को
अपने पूरे परिवेश को।

सच, अब यह समझदारी
यह विवेक अब और अधिक
अपने पर ओढा नही जाता
मुलम्मे चढाकर बन्दर, भालू बन
अभिनय किया नही जाता।

कोई भी आघात
तोडे तो सही
बना तो दे शिशु सा अबोध
स्मृति विहीन
फिर गढे पुन
इस जीवन को।



मैं और मेरा परिवेश
एक दूसरे के पर्यायवाची
बनते जारहे हैं—
अधिक से अधिक
निकट होते जारहे हैं।

मेरे निकट की वायु
बहुत बोझिल होगई है
वायु-दाव कम होता जारहा है
साँस अवरुद्ध होती जारही है
शिराएँ व धमनियाँ चौडा रही हैं
आह ! इनमें पडने वाली दरारें
कितनी पीडा दे रही है।

ओ मेरे यथार्थ
ओ मेरे परिवेश
तुझे समर्पित मैं

यूँ टूटकर—
समर्पित होना—सुख ही है
पर जब दिशाएँ लावा उगलती हैं
हवाएँ बौखला कर सिर पटकती हैं
प्रकाश को अँधियारा प्रिय लगता है
तब कौन होगा मेरा सगी ?

ओ अनचाहे मेरे परिवेश
मैं—टूट टूट कर समर्पित तुझे।



दूषित परिवेश

○

कितना दूषित होगया है
आह ! मेरा यह परिवेश !

मेरे पास तक आने वाली
हर गली, हर राह
बीच में ही खोजाती है
मेरी कुशल क्षेम जानने वाले
मेरी सक्रामकता का
दूर से ही समाचार सुन

उल्टे पाँव भाग जाते हैं ।
अनेक अदृश्य जीवाणु और विषाणु
सर्पिल गेंदाकार और छड़ाकृति में
मेरे निकट आ-आकर जमा है
जो आयेगा मेरे सक्रामक वृत्त में
स्वाभाविक है—उसे पीड़ाएँ घेरेंगी
उसकी मुस्कानें—चीखों में बदलेंगी
उसकी आँखें—पीलिया जायेंगी
उसके बाजू—कटी शाखाओं से
निढाल हो नीचे लटक जायेंगे
उसका चेहरा—उलटे लटके चमगादड़ सा
विद्रूप बन जायेगा ।

कौन आयेगा मेरे निकट ?
अपने सुनहले भविष्य के लिए
अमिट कालिमा लेने ।

कुछ दूरी पर ही
रुक जाओ ।
ओ सभी बन्धुओ मेरे
जिनके पाँव इस ओर उठे हैं ।



संक्रामकता

○

कुछ देर पहले
यहाँ अँधेरा ही अँधेरा था
कुछ दानवों के मुख से निकला
काला काला धूँआ
हर ओर छाया हुआ था।

इसीलिए,
मेरे फेफडों में
काला धूँआ भरा है
शिराएँ कुरूप होगई हैं
और काले खून से भरी
मेरी हर साँस
जहर उगल रही है।

मेरे निकट
बहुत कुछ संक्रामक है।

तुम मेरे पास न आना
सच, दूर ही रहना।

•

O

उसे एक जजीर से जकड दो
फिर जजीर को खीचो, और खीचो
इतना खीचो कि शेष न रहे कुछ भी।

उसकी क्षत-विक्षत काया को
गिद्धो के सामने डालदो
उसको कौवो से नुचवादो
उसकी सडांध को
चारो ओर फैलादो

ताकि सभी नाक पर
सुन्दर रूमाल रख कर कहें
उफ ! यह कैसी गन्ध है ?
कौनसी गन्ध है ?
किसकी गन्ध है ?

उसे कही पटक दो
हाँ, कही भी पटक दो।



बुझती चिनगारी



नगर के एक कोने मे
निर्जन सडक पर
टिमटमाते मद्धिम
लैम्प-पोस्ट के प्रकाश में
तीन बैठे व्यक्ति
सन्नाटे को बढाते हैं
अव्यक्त को व्यक्त
बना न पाते हैं।

बहुत कुछ एक सी बातें
घुमडती हैं एक ही जगह
जिनका हल एक सा है
पर शायद,
यों ही घुमडती रहेगी
बाहर आने से पहले ही
बेमौत मर जायेगी
जैसे कोई राख से ढकी चिनगारी
राख से बाहर आना चाहती है
पर फिर बार-बार
बुझ बुझ जाती है।



एक अस्तित्व एक परिचय

O

किसी ने बिखेर दिया है
धुले फर्श पर गिलास से शर्बत
बन गया है एक विद्रूप चित्र
जिस पर भिनभिना गई हैं मक्खियाँ
किंतु भिनभिनाहट अब भी गूँजती है।

किसी ने तोड़ कर डाल दिया है
डाल से चमकीले पत्ते को
रह गया है रक्तविहीन ढाँचा ही
शिराओं का खाका ही जो
पवन के थपेड़ों से
दिशा-दृष्टि शून्य
खोजता है अँधेरे में राह
और बार-बार पत्थर पर सिर मारता है।

•

डाल पलाश की अकेली

०

जाने किस देश से
चलकर आई है राजकुमारी
भूलकर पथ अपना
घिर गई है बगलो के देश में
छूटी है हमजोलियाँ कही दूर पीछे ही

(दूर घाटी में
धौक के वृक्षो मे घिरी
पलाश की यह मनमोहनी डाल
ढकी है मकडी के जाले में
किन्तु ऐसे में भी यह फूलती डाल
हर रोज करती शृगार है।)

पत्तियो से शून्य
डाल यह पलाश की
चारो ओर से घिरी धौक वृक्षो से
हर रोज पथ में बिछा फूलो का गलीचा
निरतर पथ जोहती है
शायद किसी अनजान राजकुमार का।



यूक्लिप्टस की कतारें — [illegible]



यूक्लिप्टस की कतारें
कि जैसे नगी वाहे हो
किसी अधखिले कौमार्य की
किसी अछूते यौवन की
कचन काया हो
किसी मधुवाला की कदली जघा हो
कि झीना वस्त्र लहराता है जिस पर
कुछ अप्रकट अनजान सुख दे
शून्य मन में भर रही हैं।

यूक्लिप्टस की दूर तक जाती कतारें
कुछ नया सा वोध देती हैं।



हम, शतरंज के मोहरे



गोल हैं,
हाथी दांत से निर्मित
पच्चीकारी के नमूने हैं
मीनाकारी से सज्जित
हाथी, घोडा, मंत्री—सभी हैं
हमी से है जग का वैभव सुवासित।

पर चलते हैं
बँधी लकीरों पर
ढाई घर की चाल से
कहीं पर रख दिये जाते हैं
घर नहीं है अपना कोई
खानाबदोश हैं,
दूसरों से हैं नियंत्रित
मात्र दूसरों की इच्छा के इशारे हैं।



प्रतिक्रिया



तुम मुझे देख मुस्काये
सिर को एक ओर झिटका
दोनो हाथ जोड
अभिवादन किया
बडे विनम्र बने तुम
कहा – कैसा चल रहा है ?
कोई नयी बात ?
इधर क्या क्या लिखा है ?
क्या लोगे तुम ?
ठंडा या गरम ?

शिष्टाचार में कुशल
वाक् पटु मीत मेरे
मैं इस सबके लिए
बहुत-बहुत अनुगृहीत हूँ ।

किन्तु भाई,
मैं बहुत—बहुत भरमा रहा हूँ ।
यान्त्रिक तुम्हारे इस व्यवहार से
भयभीत हूँ—
हा, बहुत भयभीत हूँ ।



वसन्त आगमन

O

पीले रंग का नही
खास तो वसन्त
सुना था कुछ ही दिन पूर्व
यहा—वहा सब जगह आया था ।

किन्तु मित्र
क्या तुमने उसे देखा था ?
नही,
फिर अवश्य ही सुना होगा
ज्यो मैं सुनता हूँ
कि वसन्त आया था ।

कैसी विडम्बना है
वसन्त आया
उसके बारे में केवल
सुना ही गया
किसी ने देखा नही ।





एक देश था
महान् देश
उसकी महान् संस्कृति थी
उसके लोग चरित्रवान्
और नीतिवान् थे।

उस देश की महिलाएँ
नग्न विचरण करती
कोई पुरुष आँखें उठाकर भी नही देखता,
पुरुष लगोट बाँधे घूमते
लगोट बाँधना, राजकीय नियमो का अग था।

फिर उस देश का पतन होगया
राज-बधन शिथिल हुए
पुरुषो ने लगोट बाँधना छोड दिया
महिलाओ को स्कट पहनना पडा।
किन्तु स्कर्ट में भी झाकने लगी दृष्टियाँ

महिलाओ का अब उस देश में
सम्मान नही रहा
महिलाए सम्मान पाने के लिए
छटपटाती है—मिनी स्कट पहनती है
और उस आदर्श समाज व महान् देश की
कल्पना करती है, जब वे नग्न विचरण
करेंगी और पुरुषो को कानूनन लगोट
बाँधना होगा।



अभिनय

○

कितना सुखकर है
अनभिज्ञ रहना
कि मेरा प्यार
मात्र प्रदर्शन है
और तुम्हारा प्यार
केवल श्रेष्ठ अभिनय।

कितना सुखकर है
इस सुखानुभूति में जीना
कि मेरे और तुम्हारे बीच
प्यार का सागर लहराता है
अनन्त और अथाह सागर
और इस यथार्थ से
निपट अनजान बनना
कि सागर में लहरें नहीं बनती हैं।

एक कगार पर मैं
दूसरे पर तुम
यूँ ही निहारते रहते हैं
अपने अपने अभिनय को
मात्र कुशल दर्शक से।



तीन छोटी कविताएँ

O

◆ एक सन्धि

न होने के लिए
हम प्रतीक्षित रहे
होने के लिए
हमारी क्रियाएँ मौन रहीं।
होने और न होने के बीच
हमारा द्वन्द्व चलता रहा
किंतु शीघ्र ही समझौता हुआ
और किसी एक से संधि होगई।



◆ ◆ क्रान्तिकारी बात

हम अपनी रेखाओं को
स्वयं ही काटते चलते हैं
दूसरों से निर्मित रेखाओं पर
आसक्ति रख, उनपर चलने से
यह अधिक क्रांतिकारी है।



◆ ◆ ◆ तीर पर तुक्का

तीर पर तुक्का तो
सभी लगाते हैं
मजा तब है साथी
जब तुक्के पर तीर
फिट बठे।



○

ये नंगी बाहें
सौन्दर्य किसी का
ये सर्द आहें
कौमार्य किसी का
ये क्रीम पाउडर
गुलाबियत किसी चेहरे के
ये रूज और लिपस्टिक
अधखुले किन्हीं अधरों के
निर्माण कर रहे हैं
सभ्य समाज भवन का
कि जिसकी चहार दीवारी है
कैफे, रेस्त्राँ, कॉफी हाउस
और उनमें आर्केस्ट्रा का स्वर
कि जैसे चीत्कार किन्हीं आहों की
और उनके बीच
कहकहे—ऊँचे, बहुत ऊँचे हैं।

फिर भी घुटन है
अश्लील बहारों में
छुरी काँटों और प्लेटों की खटपट में
अजीब बेसुरा संगीत है।

कैफे का बैरा
ऊँचे तुर्रे वाला
दरवाजे पर बैठा
पहरा देता है
अन्दर के सब कहकहों पर
जो अपने को उन्मुक्त
कहने का दम भरते हैं।

•

मैं कहां ?

O

नये ताने बानो के बीच
घिरा मैं
अनोखे आवरणो से
ढका मैं
निजी व्यक्तित्व से वहुत दूर
घिर आई नई सस्कृति के
मोह जाल मे
आवृत्त मैं
कृत्रिम मुस्कानो के नियत्रण से
वोझिल मैं
अनिच्छित अभिवादनो से
वहका मैं
प्रसाधनो की अगूरी गध से
गधाया मैं
शीशाई दुनियाँ के कठघरे में
खडा नुमाइशी मैं
गहमागहमी के नये तरानो मे
वहता मैं
आज कहा आगया हूँ मैं ?
जहाँ सब कुछ है
सिफ नही हूँ मैं ।

•

एक आश्वासन एक संकल्प



वहां सलोना रूप है
निरा निरा
पर घिरा है
शीशे की चमकीली दीवारों में
और घुटा जारहा है निरन्तर।

बाहर आने के
द्वार सभी हैं बन्द
लगता है कर दिया किसी ने
कैद गैस के पानी को
सोडे की बोतल में
मजबूरी का काग लगा है
बोतल के मुंह पर।

ऐसे में भी पलता है मन
एक सुहाने आश्वासन पर
कि एक दिन कोई आएगा मीत
खोलेगा मेरे बंधन
देने मुझको — मुक्त श्वास
या फिर एक संकल्प पर
कि शीशे की चमकीली दीवार तोड़
निकल बाहर आजाये हम।



आह्वान

○

खोल दो खिड़किया
हटा दो सभी परदे
यूँ क्यो घुटन पर
जी रहे हो ।

आओ, बाहर आओ
फागुन है, होली है
आगन मे
रगभरी पिचकारी ह
और बाहर उड रही
रगीन अबीर ह ।

आओ, बाहर आओ
ढपली पर गीत गाओ ।



गन्ध के दरिए की प्रतीक्षा



अनखिली डाल का खिलना
डाल पर सोन चिडी का चहचहाना
मन्द-मन्द हवा का
बार बार पत्तो से मिलना जुलना
और एक सुगन्ध के दरिए का
चारो ओर बेतहाशा फूट पडना
यह सब कब होगा ?

और रूई सा कोमल
नये पत्ते सा चिकना
मृदु गात तुम्हारा
अब फिर कब मिलने को है ?

मै प्रतीक्षित हू
उस सबके लिये ।



ओ सुकेशी

○

कुछ धधकते अँगारे
अब और लाल हैं
कुछ पिपासित अधर
अब और प्यासे हैं।

तृष्णा बुझी नही
मृग सी वह दिग्भ्रान्त है
चारो ओर नाचती किन्नरियाँ
नूँपुरो पर थिरकती अप्सराएँ
गूँजते हृ अनेक देव स्वर
अकुला उठा है सारा वन प्रान्तर।

ओ मृगनैनी,
कोई ओर—छोर तो दो
कोई मीठे बोल तो दो
डूबते को कूल तो दो।

ओ सुकेशी,
मधुर कुछ बोल तो दो।

आह्वान तुम्हारा

○

जलते दीप सी
कोई दो आँखें
चाँद सी शीतलता लिए
मुझे बा-बार बुलाती हैं।
पुतलियो में तैरती मछलियाँ
चेहरे पर उठते हुए भँवर
बिछलती हुई अनुपम मुस्कानें
दूर से ही मुझे पुकारती हैं।

पर इन सब के बीच
अनेक पुल, जगल और पवत हैं
और मेरी शक्ति सीमित है
इन्हे आलिगन मे बाँध नही पाती है।
चुम्बन को लालायित मेरे अधर
आलिंगन को उठती बाहे
मृदु स्पश का आकाक्षी यह तन
सिहरता रह जाता है।

अग अग मे गुलाब खिलें
सारा वन प्रान्तर खिल-खिल उठे
पेड पर टिकी चिडिया फुर-फुर उडे
इस सबके लिये ही
आज आह्वान तुम्हारा है।

◆

तनिक ठहरो

ठहरो,
तनिक ठहरो।

अभी अभी रंग और अबीर
यहाँ वहाँ बिखरने वाला है
यह जो सूना सूना है
यह जो पतझड है
उदासी का आलम है
मुरझाई मुस्काने हैं
टूटते कगारो पर मचलती
उफनती साँसें हैं
यह जो सब अनाहूत है
और उसे ओढे हैं हम
टूटने वाला है।

ठहरो,
तनिक ठहरो ।

अब बाहों की मछलियां
मचलती हैं
अब आंखों की पुतलियां
स्वत ढलती हैं ।

एक गर्म सीसा
मेरे पूरे शरीर में
व्यापता जारहा है ।

अब मेरे अग
गध बिखेरगे
पराग उँडेलेंगे
और फिर
यह सारा माहौल
लहलहा उठेगा ।

ठहरो,
तनिक ठहरो ।



O

मद्धिम प्रकाश तले
जब आज साज सजे
बिखरा जब मोहक संगीत
थामा मैंने तुम्हारा हाथ
कटि को दिया एक सहारा
आर्केस्ट्रा के साथ-साथ
दाँये बायें पटके पांव
और अपने से चिमटाने का
किया सुखद यत्न
तुम्हें ले झूमता रहा
और पीता रहा
ईवनिंग-इन पेरिस, रूज
लिपस्टिक, क्रीम की गंध के जाम
तब सारा जग वैभव
सिमट कर रह गया
सिर्फ हम तक ही।

पर
यह क्या हुआ ?
टूट गया संगीत
छूट गया तुम्हारा कोमल गात
दूर होगया मादक स्पर्श
और मैं प्रतीक्षा रत रहा
कि फिर कब गूँजेगा
नई ध्वनि से पूरित-
आर्केस्ट्रा से नया स्वर।



मिलन

O

सब दृश्य
सब भाव
सब रस
साक्षात् होगये।

अभी अभी जो अप्राप्य था
वह प्राप्य होगया।
अभी-अभी जो अनन्त में था
सामने साकार होगया।
अभी अभी जो मौन था
अबूझा सन्नाटा था
ऐंद्रिक-जाल सा टूट गया।

अब तो शख बजने लगे
अब तो घंटे, घडियाल
एक स्वर से
एक साथ गूंजने लगे
अब तो विभिन्न रूप
एक रूप मे आत्मसात् होगये।

•

उसके के तीन रूप

○

कभी वह शिशु बन जाता है
मृगछौना सा
मेरे अंक मे सिमट जाता है
उसकी खिलखिलाहट
किलकारियो में बदल जाती है
वह लघु प्राणी बन
मेरे निर्देशो पर नांचने लगता है।

कभी वह तरुण बन जाता है
उसकी मुस्कानें मुझे खींचती हैं
उसका सुन्दर, सुडौल शरीर
आलिंगन को न्योतता है
वह मदन बन
मुझे तेजी से खींचने लगता है।

कभी वह प्रौढ बन जाता है
लम्बी-लम्बी बहसों में उलझता है
मोटे-मोटे पोथो में खपता है
सुन्दरता-कुरूपता के विश्लेषण में
मेरे प्रत्यक्ष रूप को भूल जाता है।

उसे शोर नही भाता
कभी उसे शोर भाने लगता है।

मैं उसके तीनो रूपो मे
जीती हूँ।
किन्तु हाय !
मुझे उसका हर रूप
बहुत बहुत भाता है।



○

उसे सब छोडकर
चले गये।
अभिवादन करते
रूमाल हिलाते
सब लौट गये।

सि धु तट पर
टूटते कगारो पर
वह अकेला
बनने--मिटने के क्रम का
साक्षी बन रह गया।

फिर उसे लहरो का
मौन निमत्रण मिला
और उस झझाओ का
गर्जन सुनाई दिया
फिर उसे बहुत से फेन
लपलपाते दिखलाई दिये
फिर उसे सि धु के दानवो ने
निगलना चाहा।

वह अकेला था
सब उसे छोडकर
दूर चले गये थे।



अल्पजीवी

○

दो घड़ी मिल बैठे
मीठी बातें की
फिर एकाएक
पछी से फड़फड़ाये
अलग थलग दूर राहों पर
भटकने को चल पड़े हम ।

और यों —
एक घरौंदा मिट्टी का
ढह गया, वहीं ।



तुम्हारा विधान

○

धधकती ज्वालाओं के
अग्नि कुण्ड में
यों धकेल कर मुझे
दूर खड़े हो मुस्कराना
शायद तुम्हारा ही विधान हो।

◆

चाह

○

कल चाद निकला था
शरद की पूनो का
चाहा था उसे बाहो मे भरलू
चाँद को तुम्हारे ललाट पर
टीके की जगह रख दूँ
दूधिया चादनी को
तुम्हारे गोरे मुख पर मल दूँ
पर, बाहे छोटी थी।

कल चाद निकला था
शरद की पूनो का
चाहा था तुम्हारे हाथ थामें
चलता चलूँ लम्बी राह पर
खोजने उस देश को
जहाँ सोने से दिन
चाँदी सी रात होती है
पर हाथ खाली था।

●

बहुत देर बाद

○

बहुत देर बाद
तुम्हारे द्वार पर पहुँचा
तुम्हारे आँगन का गुलमुहर
सूना सूना खड़ा था।
अमलतास के वासन्ती फूल
बिखरकर भुरभुरा गये थे।

आँगन में टँगे पिंजरे का पक्षी
प्यासा था—
दूर तक लहरी बेल
सूख गई थी
और एक अजीब अलसाई गन्ध से
आगन भरा हुआ था
तब मैंने जाना
कि तुम्हारे द्वार
बहुत देर बाद पहुँचा मैं

◆

निरर्थक गुहार



हम एक दूसरे को गुहारते रहेंगे
तेजस्वी उच्च स्वरो में
हमारा यह क्रम निरंतर चलता रहेगा।

हमारे ये उच्च स्वर
विद्युत् तरंगो जैसे ऊपर उठेंगे
किन्तु किसी निश्चित
हैवी साइड लेयर के अभाव में
वापस परावर्तित नही होंगे,
यदि कभी इनका परावर्तन भी हुआ
तो मुझे सन्देह है—
वैसा होने पर
उस स्थिति में
अंतरतम की गुहाओं से
फूट निकली ये गुहारें
किसी रिसीवर द्वारा स्वीकार भी होंगी ?

यदि इन्हे स्वीकारने के लिए
किसी रिसीवर ने साहस किया
तो लाइसेंस के अभाव मे
निश्चय ही पकडे जायेंगे।

हमारे स्वरो की केवल यही नियति है।



धधकते अंगारों का तूफान

○

एक तूफान
तोड़ने को कूल
एक दावानल
धधकते अंगारों का
एक तूफान—
गरजता—लरजता-सा
आसमान को तोड़ता
आज फिर
प्रस्तुत है।

हर ओर घटाएं गूंजती
लहरें बार बार झकझोरती
दूर-दूर से आते अबूझे निमत्रण
मैं मैं क्या करूँ ?

ओ सुमुखि,
तुम्हारा रूप सौंदर्य
आज फिर फिर
मुझे घेरता है।

स्मृति की गागर

○

बहुत ढो चुका हूँ
तुम्हारी स्मृति की
इस अनोखी गागर को।
सभी स्मृतियाँ अभीतक गागर में हैं
नीबू के अचार सी सुरक्षित।

अब भी तुम्हारा प्रतिबिम्ब
आँखों में छा छा जाता है
मेरे संग भागती तुम्हारी परछाँई
बार-बार स्मृति घट की ओर
मृग-तृष्णा सी खींच ले जाती है।

मैं अकेला,
तुम्हारी स्मृति की परछाइयाँ अनेक
लगता है घिर गया हूँ
किसी बेगाने देश में
जहाँ अपनत्व नहीं है
जहाँ सिर्फ दुराव के कंकड काटे हैं।

बिना पनघट पर आये
कौन धरेगा घट तुम्हारे सिर पर
कुछ आगे बढ़कर,
तुम ही वापस लेलो अपनी सौगात
बहुत करली रखवाली अब तक

◆

एक मन स्थिति

o

लम्बी-लम्बी सांसें लेता हूँ
आँखें मीच सोचने लगता हूँ
फिर आँखें खोल लेता हूँ
चैन नही मिलता
एलबम उठाता हूँ
फोटो देखता हूँ
बेचैनी बढती ही है।

पत्रो का पुलन्दा खोलता हूँ
पढने का साहस नही होता,
पार्क मे जाता हूँ
बेंच पर लेट जाता हूँ
धीमे धीमे गुनगुनाता हूँ
तभी दूरी पर वह झुरमुट दीखता है
बेचैनी और बढ जाती है।

पाक से लौट आता हूँ
बिछौने पर लेट जाता हूँ
सामने कलण्डर नजर आता है
जिस पर केवल पसीजती आँखें ही
देख पाता हूँ।

आँखें मीच सोने का
ढोंग रचता हूँ
कम्बख्त नींद आजाती है
और फिर उठने का जी नही होता
सपना सुन्दर जो था।

•

रात का स्वप्न

○

रात का स्वप्न
ओस के मोती-सा
चमका फिर वाष्प बन गया।

उसकी वाष्पीय उष्णता
मेरे मानस में
शैतान के शिशु की क्रीडाएँ सी
केवल खेलती रही।



फिर से

O

फिर से छागये घने वादल
फिर से लहराया पुरवाई का आँचल
फिर से हरा भरा हो उठा
सारा वन प्रान्तर
फिर से उभर आये
तुम्हारी डबडबाई
आँखो के ताल-तलैया।

सब कुछ तो हरा-भरा रहा
किन्तु मन पहले से भी बेचैन रहा।



झिलमिल देह पर

O

लहरो पर
धूप छाँह का मेला
कही धूप
कही छाया
इनमें दुबकता, उभरता
झिलमिलाता रहा
तुम्हारा सुन्दर चेहरा
कभी विद्रूपता से हँस दिया
कभी प्रसन्नता से गोते खागया
साँय साय के साथ
पक्षियो का धीमा कलरव
इस सबके बीच
आँख मिचौनी खेलता रहा
तुम्हारा रुपहला चहरा—

और मैं तटस्थ भाव से
केवल निहारता ही रहा।



अलवर के निकट एक झील

ओ चाँद !

○

ओ चाँद !
पूनम के दिन
तुमने यह क्या किया ?
चारो ओर फैला दिया
जहर ही जहर।

ढेर सा,
पहले ही पी चुका था मैं।

ओ निष्ठुर,
यह तुमने क्या किया ?

◆

मरुभूमि में

O

कोई अदृश्य हाथ
कोई मौन निमत्रण
कोई वीणा की स्वर-लहरी
कोई पायल की रुन-झुन
कोई प्यार भरे गीत की पात
कोई शब्द, कोई ध्वनि
कोई दिव्य गध मिले तो,

इस सूने से मरुथल में
कोई सहारा मिले तो

•

अस्वीकृति

O

मुझे मत दो
यह सब मत दो
सँजोकर अपने पास रखो
बहुत बार ऐसा हुआ है
इस प्यार भरे अनुदान के
जन्मदाता दूर होगये हैं
केवल जन्म देकर
इन अनिच्छित शिशुओं को,

मैंने ही तब पाला पोसा है
उन शिशुओं को
नहीं, नहीं अब नहीं स्वीकारूँगा
तुम्हारा नेह भरा निमंत्रण।

हाँ प्रिये,
और मत दो मुझे
नेह भरा निमंत्रण
और मत दो मुझे
अन्धड़ से भरी रातें।

•

वापस लौटना

○

फिर मैं लौट आता हूँ

भागकर जाता हूँ
फिर वापस लौटता हूँ
कभी उसी गति से
और कभी धीमे धीमे ।

हरे भरे खेत खलिहान
खिलखिलाते झरने
गुनगुनाती नदियाँ
गर्वोन्नत पहाडियाँ
ये सब मुझे बुलाती हैं
मैं जाता हूँ—
और फिर वापस लौट आता हूँ ।

वापस लौट आने पर
फिर एक के बाद एक
आकर्षक निमन्त्रण आने लगते हैं
मैं चल पडता हूँ।
कभी मुस्कराती लडकियो के बीच
और कभी प्रौढाओ को सुख देने
कभी स्खलित होने
कभी स्खलित करने।

इसके बाद फिर लौट पडता हूँ
किसी नई जगह की तलाश में—

नई-नई जगहो की
तलाश करता हूँ
नये-नये चेहरो को
प्यार करता हूँ।

लगातार उबकाई के कारण
गहरी शिथिलता के साथ
वापस लौटता हूँ,
फिर मैं वापस लौटता हूँ,
सच, म वापस लौट आता हूँ।



तीन भ्रमात्मक कविताएँ

O

[१]

तुमने कहा—
और मैंने सुन लिया
इतने से ही
न तो मैं श्रोता बना
और न तुम वक्ता।

तुमने जो माना
वह नितान्त भ्रम ही था।

[२]

मैंने कुछ माँगा
जो तुमने दिया
वह मैंने सहर्ष स्वीकारा
किन्तु इसीसे
मैं तुम्हारा कर्जदार कैसे बन गया।

[३]

वे बहुत कुछ पाने पर
छोड़े हुए थे
और हम निरन्तर थे
छोड़े हुए वे भरमाये
सन्त महात्मा,
और हमें सन्त अगम्य कहा गया।

•

किरणों से निवेदन

O

मेरी खिडकी के सीखचो से
हर सुबह को झाकने वाली
ओ सुनहली किरणो
मुझ बन्दी को
कोई सन्देश सुनाओ
अपने देश का

कुण्ठाओ, आपदाओ के प्लास्तर को
तोड दो तुम
बैठो मेरे निकट
मेरे निश्वासो की गरमाहट लो
मुझे सहलाओ
मुझ दुलराओ।

म हर सुबह
इसी आशा से
खिडकी का पल्ला खोलता हूँ।

•

झील पर संध्या



पहाड़ी की ओट में
रूप देश का कमाऊ बेटा सूरज
लहरों का ले अंतिम चुम्बन
लौटता है अपने गेह
तोड़ सारा नेह ।

सीधी रेखाओं में पातें सजाते
प्यार का गीत गुनगुनाते
अपने घर लौटते हैं पक्षी
तभी घिर आता है अँधियारा
फैलाता काले पंख अपने
आ बैठता है झील के वृक्ष पर ।

मौन सभी, भयभीत सभी
लहरें शान्त, पतवार थमी,
हवा की सनसनाहट नहीं
तट के पत्तों में कम्पन नहीं
नौकाएँ सभी नाविकहीन
तट से बँधी ।



चांदनी रात में झील



दूधिया चांदनी से भरा आकाश
लहरों से किलोलें करती मन्द-मन्द हवा
दूर चांदी से ढके पर्वत
और उनके बीच उठा
सुनहला चांद
खेलता है लहरों के समूह में।

चप्पू की चप-चप ध्वनि
दूर तक दूधिया साड़ी पहिने
नवयौवना शरद की चाँदनी
खिलखिलाकर देखती जल में रूप अपना
जल में चमकती उसकी दँतुलियाँ।
और दूर घाट पर टिमटिमाते
दीपों की टिमटिमाहट
और लहराता प्रतिबिम्ब।

किनारों पर खड़े वृक्षों की सनसनाहट
स्वच्छ जल में ऊपर उठ
खेलती मछलियों की छपछपाहट
बहुत मन को भरमाती है
दूर देश को खींच लेजाती है।



परिवर्तन

O

उन्मुक्त आकाश
धुंधआने लगा है
तेज गति से चलने वाला पवन
रुक सा गया है।
यह क्या होता जारहा है ?

आस्थाओ के खेमे
एक के बाद एक
अपने आप उखडने लगे हैं
और एक शून्य से भरा आकाश
सामने नज़र आने लगा है।
यह क्या होता जारहा है ?

वे सभी दिवा स्वप्न
रग और अबीर से भरा माहोल
लहरो में उलटता पुलटता
भँवरो म डूबने लगा है
यह क्या होता जारहा है ?

कई खण्डो वाला महल
खिडकियो पर झिलमिलाते
रगीन परदो वाला महल
धीरे-धीरे और धीरे
अपने आप ढहने लगा है
यह क्या होता जारहा है ?

चमकीले पखो के साथ
मैं भरे पूरे आकाश में
दूर दूर तक उडने चला हूँ।
पर—पर एक घने कोहरे में
डूबता जा रहा हूँ।
यह क्या होता जारहा है।



अगली घोषणा

○

एक घोषणा के बाद
एकाएक बेहद शोर होने लगा
रंगमंच के कुछ पात्रों ने
अपनी शाही पोशाक उतार दी
और वे भगवा वस्त्र पहन
तीर्थ-यात्रा का बहाना करने लगे।

(उद्घोषक की घोषणा पर
अभिजात्य दर्शकों ने
अपने चेहरे लटका लिये
उनका कहना था—
रंगमंच त्यागने वाले प्रमुख पात्र
अपनी क्रूरता के कारण
यथार्थ अभिनय करते थे
इसलिए वे उनके प्रिय थे।)

सामान्य दर्शक जय जयकार के साथ
फूलमालाएँ लेकर उद्घोषक की ओर बढे।

इस घोर अव्यवस्था पर
दर्शकों का भ्रम—"यवनिका पतन"
शीघ्र ही दूर होगया।

परदे उठाने वालो ने
शाही पौशाक धारण की
और सच्चे स्वरो में डायलॉग बोलने लगे
पश्चिमी वाद्य व धुन के स्थान पर
ढोल, मजीरो पर लोक-धुन उभरने लगी
नये पात्रो को लेकर प्रदर्शन आगे बढा।

भगवा वस्त्रधारी रंगमंच के वे पात्र
दर्शक दीर्घा की अगली पांत में
मूछों पर बल देते
दाढियो पर हाथ फेरते
लगातार सीटियां बजा रहे थे।

दर्शक नाटक के अगले अंक की नहीं
नयी घोषणा की प्रतीक्षा कर रहे थे।



○

न मागो मुझसे मेरी वसीयत
चाहता हूँ मेरा मरण
बिना वसीयत के ही हो।

मै खाली हाथ आया था
खाली हाथ वापस जारहा हूँ
कुछ नया नही दे पाया हूँ
जो जीया है, भोगा है
उसे योही गोपनीय रखना चाहता हूँ।

अनास्था के इस युग में
मेरी जीविका, मेरा सृजन
पावन नही रहा है।
इसीलिए आने वाली पीढी को
अपनी गध, अपनी छुअन
देना नही चाहता हूँ।

अपनी कुण्ठाओ, वजनाओ से
मै स्वय ही मजबूर हुआ हूँ
इस टूटन की कोई वसीयत नही
मन यही चाहता है।

मेरी वसीयत
खाली कागज ही होगा
जिस पर नई पीढी
नये शब्दो में कुछ लिखेगी।



एक अभाव

○

एक दिव्य ज्योति
पुण्य आलोक
जो यहाँ मेरे पास
बिखरा हुआ था।
अब मुझसे कहीं दूर
बहुत दूर चला गया है
शायद,
सदा सदा के लिए।

●

पिता की मृत्यु पर

मनहूस दिन की स्थिति

O

उल्लास भरी स्वर लहरियाँ
उन्मादकारी गीत
लुप्त होगये।
मुस्कानों से भरे चेहरे
लटक गये गहरी उदासी में।

ऊँचाई में—
फहराते हुये ध्वज
झुक गये सम्मान से
आकाश में रश्मि-रथ की वल्गाएँ थामे सूर्य
किंकर्त्तव्यविमूढ बन अपने स्थान पर टिक गया
हवा इधर उधर अपने सिर को पटकने लगी।

दिशाएँ अंधकार से भरी थी
और करोड़ो आँखें नम थी
उनका बहादुर लाल
क्रूर काल ने छीन लिया था।

◆

[श्री लालबहादुरजी शास्त्री की मृत्यु के समाचार को सुनकर]

आभार प्रदर्शन

O

अभी-अभी
एक बहुत बडा अकुश
तेजी के साथ उछलता हुआ
मेरे मानस सिन्धु में आ गिरा है।

अभी-अभी
मेरी देह के एक कोने मे
जो सूखा भूसा भरा था
उसमें लौ उठने लगी है।

आश्रय की तलाश में
मारे-मारे फिरने लगे हैं
एक घोर अवसाद में डूबे
निराशा से ग्रस्त
दम तोडने लगे है।

मैंने जो सचित किया था
जिससे था मुझे बडा मोह _
वह ही छलता
खोगया है कही।

और मेरे अपनो ने मुझे
परिचित परिवेश से
बाहर खीचकर पटक दिया है।
मेरे वे सभी
जो समय-समय पर
मेरा होने का दम भरते है
और फिर एक झटके के साथ
मुझ किसी शिखर से
नीचे बहुत नीचे
किसी ख-दक में
धकेल जाते हैं।

ऐसा ही—
अभी-अभी हुआ है।
मैं आभारी हूँ
उन अपनो के प्रति।





श्री भागीरथ भागव म्राज
कविता के क्षत्र में एक
हस्ताक्षर के रूप में स्थापित हं
हैं। श्री भागव राजस्थान के ि
प्रतिष्ठित कवि तो हैं ही किन्तु
स्थान के बाहर म्रन्य प्रान्तोमें
भागव के साहित्यिक मित्रो व प्र
की सख्या बहुत बडी है। श्री
म्राकषक व्यक्तित्व वाले सौम्य क

'समीक्षा' (म्रालोचनात्म
मासिक) का दो वष तक
सम्पादन किया म्रौर तत्पश्चा
१६६० से 'कविता' का सम्पाद
रहे है। म्राकाशवाणी म्रौर
की पत्र पत्रिकाएँ श्री भाग
रचनाएँ प्रकाशित कर गौ
होती हैं।

सम्प्रति राजस्थान शिक्षा
से सम्बद्ध

C